काव्य कनक

पाठ्य पुस्तक

III rd Semester
B.B.A. / B.H.M. / M.T.A. /
B.B.A. (Aviation)

बी.बी.ए. / बी.एच.एम. /
एम.टी.ए. / बी.बी.ए. (एविएशन)

तृतीय सेमिस्टर

सम्पादक
डॉ. शेखर
डॉ. नीता हिरेमठ
डॉ. प्रभु उपासे
डॉ. शाकिरा खानुम
डॉ. सुधामणि एस.

ಬೆಂಗಳೂರು ನಗರ ವಿಶ್ವವಿದ್ಯಾಲಯ
BENGALURU CITY UNIVERSITY
BE BOUNDLESS

KAVYA KANAK

Edited by

Dr. Shekhar,
Dr. Neeta Hiremath,
Dr. Prabhu Upase,
Dr. Shakira Khanum,
Dr. Sudhamani S.

© बेंगलूरु नगर विश्वविद्यालय
प्रथम संस्करण – 2022

प्रधान संपादक
डॉ. शेखर

प्रकाशक
बेंगलूरु नगर विश्वविद्यालय
बेंगलूरु – 560001

भूमिका

बेंगलूरु नगर विश्वविद्यालय 2021–2022 शैक्षिक वर्ष से एन.ई.पी. – 2020 पद्धति के अनुसार स्नातक वर्गों के लिए नया पाठ्यक्रम जारी किया जा रहा है।

इस पाठ्यक्रम की संरचना ऐसी की गई है कि इसके अध्ययन के पश्चात हिन्दी साहित्य के विद्यार्थी यह जान सके कि साहित्य का विश्लेषण कैसे किया जाए – इसकी सराहना कैसी की जाए और दिए गए पाठ को पढ़ने की समझ किस प्रकार विकसित की जाए ताकि विद्यार्थी भाषा और साहित्य के उद्देश्य से भली भाँति परिचित हो सके। जैसे विज्ञान आदि विषयों के अध्ययन के साथ यह भी अधिक उपयोगी है। विश्वविद्यालय की यह शुभेच्छा है कि साहित्य और समाज शास्त्रीय विषयों के लिए भी अधिक उपयोगी और प्रासंगिक लगे। एन.ई.पी. सेमिस्टर पद्धति के अनुसार पाठ्यक्रम निर्माण किया गया है।

इस पृष्ठभूमि में हिन्दी अध्ययन मण्डल ने विभागाध्यक्ष डॉ. शेखर जी के मार्गदर्शन में पाठ्य पुस्तक का निर्माण किया है।

सम्पादक मंडल का विश्वास है कि यह कविता संकलन छात्र समुदाय के लिए अधिक उपयोगी सिद्ध होगा। इस पाठ्य पुस्तक के निर्माण में योग देने वाले सभी के प्रति विश्वविद्यालय आभारी है।

इस संकलन को अल्प समय में सुन्दर रूप से छापने वाले बेंगलूरु नगर विश्वविद्यालय तथा वहाँ के कर्मचारियों के प्रति भी हम आभारी हैं।

प्रो. लिंगराज गांधी
कुलपति
बेंगलूरु नगर विश्वविद्यालय
बेंगलूरु – 560001

प्रधान संपादक की कलम से .....

बेंगलूर नगर विश्वविद्यालय 2021–2022 शैक्षिक क्षेत्र में नये – नये विषयों को अपने अध्ययन की सीमा में ले रहा है। अध्ययन को नयी राष्ट्रीय शिक्षा नीति 2020 के अनुसार प्रस्तुत करने का प्रयत्न हो रहा है। साहित्यिक विषयों को आज की बदलती परिस्थिति के अनुसार रखने के उद्‌देश्य से पाठ्‌क्रम को प्रस्तुत किया जा रहा है।

एन.ई.पी. पद्धति के अनुसार स्नातक वर्गों के लिए पाठ्‌क्रम का निर्माण किया जा रहा है। इस पाठ्‌य पुस्तक के निर्माण में योग देने वाले सम्पादकों के प्रति मैं आभारी हूँ।

इस नये पाठ्‌य पुस्तक के निर्माण में कुलपति महोदय प्रो. लिंगराज गांधी जी ने अत्यधिक प्रोत्साहन दिया, तदर्थ मैं उनके प्रति कृतज्ञ हूँ।

डॉ. शेखर
अध्यक्ष
हिन्दी (बी.ओ.एस.)
बेंगलूरु नगर विश्वविद्यालय
बेंगलूरु – 560001

अनुक्रमणिका

01	कबीर के पद कबीर	01
02	प्रेमामृत मीरा बाई	09
03	मातृ मंदिर में सुभद्रा कुमारी चौहान	16
04	दुख महादेवी वर्मा	20
05	जो बीत गई डॉ. हरिवंशराय बच्चन	23
06	मंदिर जयशंकर प्रसाद	28
07	अकाल दर्शन धूमिल	31
08	पेड़ अज्ञेय	37
09	संयुक्त परिवार राजेश जोशी	42

कबीर के पद

कबीरदास (सन् 1399–सन् 1518)

कवि परिचय

कबीरदास भक्तिकाल के ज्ञानमार्गी शाखा के प्रतिनिधि कवि हैं। कबीर बहुमुखी व्यक्तित्व के धनी थे। कबीर भक्त, समाज सुधारक, चिंतक, दार्शनिक, रहस्यवादी कवि थे। उन्होंने अपने व्यक्तित्व एवं चिंतन से समय और समाज को प्रभावित किया था।

कबीर का जन्म वाद–विवादों से भरा है। उनका जन्म काशी में हुआ था। नीरू और नीमा दंपति ने इन्हें पाला–पोसा था। कबीर की पत्नी का नाम लोई और उनकी संतानों का नाम कमाल और कमाली था। कबीर जुलाहे थे। इनके गुरु रामानन्द थे। कबीर के मतानुसार राम निर्गुण, निराकार और घट–घट वासी हैं।

इनके काव्य में गुरु की महानता, परमात्मा की सर्वव्यापकता, नाम स्मरण की महत्ता, आचरण की शुद्धता, जीवन के अनुभवों से प्राप्त नैतिक विचारों का चित्रण है। इनके काव्य का मूल उद्देश्य समाज को सही रास्ता दिखाना है। अतः इन्होंने मूर्ति–पूजा, जात–पांत का विरोध, तीर्थ स्थान की यात्रा, पूजा पाठ, साधु संगति, मधुर वचन, भक्ति एवं उपदेश आदि पर प्रकाश डाला है।

कबीर पढ़े–लिखे नहीं थे मगर लोकानुभव के घनी

थे। उनकी भाषा सधुक्खड़ी है। इनकी शैली सरल, सहज, स्पष्ट बोधगम्य, काव्यमयी एवं प्रभावशाली है। इनकी रचनाएँ साखी, सबद और रमैनी के रूप में है।

*****

कबीर के पद

1

भाईरे चूंनबिलूटाखाई
बाघनि संगि भई सवहिन के,
खसम न भेद लहाई ॥ टेक ॥
सब घर फोरि विलूंटा खायौ, कोई न जाने भेव।
खसम निपूतौ आंगणि सूतौ, रांड न देई लेव ॥
पाड़ोसनि पनि भई विरांनी, मांहि हुई घर घालै।
पंच सखी मिलि मंगल गांवें, यह दुख याको सालै ॥

2

द्वे द्वे दीपक घरि घरि जोया मंदिर सदा अँधारा।
घर घेहर सब आप सवारथ, बाहरि किया पसारा ॥
होत उजाड़ सबै कोई जानें, सब काहूँ मनि भावै।
कहै कबीर मिलै जे सतगुरु, तो यहु चून छुड़ावै ॥

3

विषिया अजहूँ सुरति सुख आसा,
हूँण न देइ हरि से चरन निवासा।।टेक।।
मुख मांगें दुख पहली आवै, तातैं सुख मांग्यां नहीं भावै!
जा सुख थैं सिव विरंचि डरांनां
सो सुख हमहु सच करि जाना।।
मुखि छ्याड़्या तब सब दुख भागा,
गुर के सवद मेरा मन लागा।
निस बासुरि बिषैतनां उपगार, बिषई नरकि न जातां बार॥
कहै कबीर चंचल मति त्यागी,
तब केवल रांम नांम ल्यौ लागी॥

4

तुम्ह गारड में विष का माता,
काहै न जिवावौ मेरे अमृतदाता॥टेक॥
संसार भवंगम डसिले काया,
अरु दुख दारन व्यापै तेरी माया॥
सापिन एक पिटारे जागे, अह निसि रोवें ताकू फिरि लागै॥
कहै कबीर को को नहीं राखे, राम रसांइन जिनि चाखे॥

5

माया तजूं तजी नहीं जाइ।
फिरि फिर माया मोहि लपटाइ ॥टेक॥
माया आदर माया मान, माया नहीं तहां ब्रह्म गियांन॥

माया रसे माया कर जांन, माया करिन तजै परान ॥
माया जप तप माया जोग, बाँधे सबही लोग ॥
माया माया जल थलि माया आकासि,
माया ब्यापि रही चहुं पासि ॥
माया माता, माया पिता, अति माया अस्तरी सुता ॥
माया मरि करै ब्यौहार, कहै कबीर मेरे रांम अधार ॥

*****

शब्दार्थ एवं भावार्थ

1 .

शब्दार्थ – चूंन = शरीर, पुण्य कर्म। विलूंटा = बिल्ली, माया। बाघिन = बिल्ली और बाघिन एक ही जाति की है। इसी कारण माया को कभी बिल्ली और कभी बाघिन कहते हैं। खसम = स्वामी, प्रभु। भेव = भेढ़। पंच सखी = पांच ज्ञानेन्द्रियां। याकों = भक्त को। जोया= ढूंढा।

भावार्थ : कबीरदास यह बताते हैं कि माया रूपी बिल्ली, मनुष्य के इस लोक (तन) और परलोक (पुण्य कर्म) को किस प्रकार नष्ट कर डालती है।

कबीरदास कहते हैं कि भाइयो! माया रूपी बिल्ली सभी लोगों के सत्कर्मों को नष्ट कर रही है। यह माया रूपी बाघिन हमेशा सब के साथ लगी रहती है और किसी को प्रभु का भेद नहीं जानने देती है। इस माया रूपी बिल्ली ने समस्त मनुष्यों के शरीरों को पूरी तरह बर्बाद कर दिया है, परन्तु आश्चर्य की

बात यह है कि इस भेद को कोई नहीं जानता है। कुछ लोग तो यही नहीं समझ पाते हैं कि वे वस्तुतः पतित हो रहे है। और जो अपने बर्बाद होने के प्रति सजग भी हो जाते हैं, वे यह नहीं समझ पाते हैं कि इस बर्बादी का हेतु यह माया (सांसारिक आकर्षण) है। इस माया का पति पुत्रहीन है और उसका आँगन सूना है और सबसे बड़ी बात यह है कि दुश्चरित्रा किसी को उसका पुत्र बनने भी नहीं देती है। अभिप्रेत अर्थ यह है कि प्रभु सब प्रकार के ममत्व के परे हैं और इसी कारण वह किसी प्रकार के बन्धन में नहीं पड़ता है तथा यह अभागिनी माया किसी को प्रभु का सच्चा भक्त नहीं बनने देती है। इसी माया के कारण मनुष्य अपने समीपस्थ प्रभु के लिए पराया हो जाता है और इस प्रकार यह माया मनुष्य और उसके घट में स्थित भगवान के मध्य दीवार खड़ी करके जीवन को नष्ट करने में सफल हो जाती है। मनुष्य के माया में लिप्त हो जाने पर उसको पाँचों ज्ञानेन्द्रियाँ भी अपने–अपने स्वादों (पंच विषयों–रूप, रस, शब्द, स्पर्श, गन्ध) में लग कर मोद मनाने लगती है। ज्ञानेन्द्रियों का यह आचरण भी मनुष्य को कष्ट पहुँचाता है।

2.

भावार्थ : इस माया द्वारा ग्रस्त होने के कारण मनुष्य ऐसा निर्बुद्ध हो जाता है कि वह दो–दो दीपक जलाकर बाहर घर में तो उजाला करके प्रभु को ढूंढ़ने का प्रयत्न करता है, परन्तु उसके हृदय रूपी मन्दिर में अन्धकार बना रहता है, जहाँ यदि प्रकाश हो जाए तो तत्काल प्रभु का दर्शन हो जाए। इस पंक्ति का अधिक संगत अर्थ इस प्रकार होगा– मूलाधार चक्रस्थ सूर्य तथा सहस्रारस्थ चन्द्र रूपी दो दो दीपक इस

शरीर में जलते रहते हैं, किन्तु माया में लिप्त होने के कारण उसके शरीर रूपी मन्दिर में अन्धकार बना रहता है अर्थात् वह ज्ञान नेत्र बन्द होने के कारण इस प्रकाश में देख नहीं पाता है। इस घर रूपी शरीर के रहने वाले मन, बुद्धि, चित्त, अहंकार आदि अपने स्वार्थ को सिद्ध करने में लगे रहते हैं तथा बाह्य जगत् में ही सदैव लगे रहते हैं – स्थूल प्रयोजनों की सिद्धि में ही अपनी शक्ति लगाए रहते हैं। इस पंक्ति का अर्थ इस प्रकार भी किया जा सकता है कि मनुष्य अपनी सीमाओं में स्वार्थ–साधन से ही सन्तुष्ट नहीं होता है, वह अपनी शक्ति और अपनी औकात के बाहर भी स्वार्थ–सिद्धि के प्रयत्न करता है।

3.

शब्दार्थ – विषिया = विषय–भोग। सुरति = मन। बिरंचि = ब्रह्मा। उपगार= उपचार, उपाय। बार = देरी।

इस मन को अब भी इन्द्रियों के भोग के द्वारा सुख प्राप्ति की आशा बनी हुई है। इसी से वह हरि के चरणों में निवास नहीं होने देता है। सुख की इच्छा करने पर दुःख पहले का जाता है। इसलिए सुख मांगना ही अच्छा नहीं लगता है। विषय–वासनाओं के जिस सुख से शिव और ब्रह्मा भी भयभीत है उसी सुख को हमने सत्य और स्थायी मान लिया है। जब से इस सुख की आकांक्षा छोड़ दी तब से दुःख भी भाग गया और मेरा मन सद्गुरु के उपदेश में तल्लीन हो गया। जीव रात–दिन विषयों के भोग का उपाय करता है अर्थात् विषयों में लिप्त रहता है। विषय–भोगों में लिप्त (कामुक) व्यक्ति को नरक में जाते हुए देरी नहीं लगती है। कबीरदास कहते हैं कि जीव जब

चंचल बुद्धि का त्याग कर देता है अर्थात् स्थिर बुद्धि हो जाता है, तब उनको लौ केवल राम के नाम में जाती है अर्थात् सामारिक विषयों में विमुख होने पर ही जीव का मन राम नाम में अनुरक्षण हो सकता है।

4.

शब्दार्थ : गारडू = गरुड़। माता = पागल। भवंगम = भुजंगम, सर्प। डसिये = डस लिया, दस किया। काया = शरीर।

भावार्थ – हे अमृत प्रदान करने वाले प्रभु! आप गरुड़ के समान हैं और मैं सर्प के विष से बेसुध हो रहा हूँ। आप मुझे जीवन दान क्यों नहीं देते हैं? संसार रूपी सर्प ने मेरे शरीर को डस लिया है और आपकी माया के कारण उस शरीर को अनेक भयंकर दु:ख सता रहे हैं। इस संसार रूपी पिटारे में माया रूपिणी सर्पिणी सदैव जागती रहती है (चेतन अवस्था में स्थायी निवास करती है जो व्यक्ति दिन–रात सोता है अर्थात् असावधान रहता है, उसको यह बार–बार डसती है। कबीर कहते हैं कि जिन जिन ने राम नाम रूपी महौषधि का पान किया, उनमें ऐसे कौन–कौन हैं जिनको आपने रक्षा नहीं की? अर्थात् जिन्होंने आपकी भक्ति के मधुर रस का पान किया उनकी इस सर्पिणी से रक्षा हो गई।

5

शब्दार्थ – तजूं = त्यागता हूँ। पास = ओर।

भावार्थ : कबीर अपनी विवशता प्रकट करते हुए कहते हैं कि ने माया को छोड़ने का प्रयत्न करता हूँ, परन्तु यह

माया मुझसे छूटती नहीं हैं। यह माया बार बार (विविध रूपों में) मुझे घेर लेती है अथवा मुझे आवृत कर लेती है। इस संसार का समस्त प्रसार मायामय है। माया ही आदर है, माया हो मान सम्मान है, जहाँ माया का प्रभाव नहीं है, वहां ब्रह्म ज्ञान है। सम्पूर्ण विषयों के रस को माया के ही परिणाम समझो। इसी माया जन्य सुखों की प्राप्ति के लिए प्राणी अपने प्राणों की बाजी लगा देता है। ये जप, तप, योग–साधन आदि माया ही के विविध रूप हैं। माया ने संसार के समस्त जीवों को अपने वश में कर रखा है। जल, थल, आकाश आदि के समस्त दृश्यमान पदार्थ माया ही है। माया चारों ओर सर्वत्र व्याप्त है। माता और पिता भी माया ही हैं, स्त्री, पुत्री आदि अतिशय माया के रूप है अर्थात् अत्यधिक मोह–ममता के आश्रय होने के कारण जटिल बन्धन के रूप हैं, ये माया के प्रगाढ़ रूप हैं। कबीर कहते हैं कि मैं माया को मार कर – मोह आदि के बन्धन से परे होकर आचरण करता हूँ। मुझे तो राम का भरोसा है– मेरे तो एकमात्र आधार राम हैं।

*****

प्रेमामृत

मीराबाई

कवि परिचय

हिन्दी की अत्यन्त लोकप्रिय कवयित्री मीराबाई का जन्म राजस्थान के कुडकी नामक गाँव में सन् 1504 में हुआ। इनके पिता मेड़तिया शाखा के राठौड़ रत्नसिंह थे। मीराबाई का विवाह मेवाड़ के महाराणा साँगा के ज्येष्ठ पुत्र कुँवर भोजराज से सन् 1516 में हुआ। दुर्भाग्यवश वैवाहिक जीवन के सातवें वर्ष में ही मीरा को वैधव्य प्राप्त हुआ। बचपन से ही कृष्ण भक्ति में रंगी हुई मीरा ससुराल में भी दिन–रात और घर–बाहर कन्हैया के भजन–ध्यान में तल्लीन रहने लगी। लोक–लाज से बेपरवाह मीरा को राणा की ओर से भारी यातनाएँ भुगतनी पड़ीं। पर वे विचलित नहीं हुई। प्रेमदीवानी मीरा का देहांत सन् 1563 में हुआ। मीराबाई की कुल ग्यारह रचनाएँ मानी जाती हैं, पर उनकी प्रामाणिकता संदिग्ध है। मीराबाई के स्फुट पद 'मीराबाई की पदावली' (सं. परशुराम चतुर्वेदी), 'मीरा–माधुरी' (सं. ब्रजरत्न दास) नामक पुस्तकों में संग्रहीत है।

'प्रेमामृत' में मीराबाई के कुछ विशिष्ट पद प्रस्तुत किये गये हैं। मीरा 'हरि अविनासी' को समर्पित थीं। उनकी भक्ति में प्रेम, विरह, प्रतीक्षा, व्याकुलता आदि व्यापार पाये जाते हैं। आचार्य रामचन्द्र शुक्ल के अनुसार उनके सब पदों में 'प्रेम

की तल्लीनता' पाई जाती है। उनका कृष्ण प्रेम निर्मल एवं प्रगाढ़ है। मीरा और कृष्ण का संबंध मधुर तथा चिरंतन है। उनकी विरह वेदना तीव्र एवं अपार है। उनका प्रेम मांसल नहीं, आत्मिक और आध्यात्मिक है।

हिन्दी साहित्य के कृष्णभक्त कवयित्री मीराबाई का स्थान सर्वोत्तम है।

उन्होंने श्रीकृष्ण के लिए अपना परिवार ही छोड़कर भक्ति में अपने को ही समर्पित कर दिया। मीरा के पदों में कृष्णभक्ति भावना, समर्पण भावना का प्रभावपूर्ण चित्रण है।

मीराबाई की रचनाएँ : मीराबाई की पदावली (सं. परशुराम चतुर्वेदी) मीरा माधुरी (सं. बररत्न दास) नामक पुस्तकों में संग्रहीत है। 'प्रेमामृत' में मीराबइ्रा के कुछ विशिष्ट पद हैं। मीरा गिरिधर नागर को समर्पित थी। उनकी भक्ति में प्रेम, विरह, प्रतीक्षा, व्याकुलता, आत्मसमर्पण आदि भावनाएँ हैं। आचार्य रामचन्द्र शुक्ल के अनुसार 'उनमें प्रेम की तल्लीनता एवं गहराई है। उनका प्रेम लौकिक नहीं, आत्मिक और आध्यात्मिक है।'

*****

प्रेमामृत

रामरतन धन पायौ मैया, मैं तो रामरतन धन पायौ।
खरचे न खूटे, वाकुँ चोर न लूटे,
दिन दिन होत सवायौ ।।मैया।।
नीर न डूबे वाकुँ अग्नि न जाले,
धरणी धरयो न समायौ ।।मैया।।
नाँव को नाँव भजन की बतियाँ,
भवसागर से तारयौ ।।मैया।।
मीराँ प्रभु गिरिधर के सरणे,
चरण – कँवल चित लायो ।।मैया।। 1 ।।

मैं गिरिधर के घर जाऊँ।
गिरिधर म्हाँरौ साँचो प्रीतम, देखत रूप लुभाऊँ।।
रैण पड़ै तब ही उठि जाउँ, भोर भये उठि आऊँ।
रैणदिनाँ वाके सँग खेलूँ, ज्यूँ–त्यूँ वाहि रिझाऊँ।।
जो पहिरावै सोई पहिरूँ, जो दे सोई खाऊँ।
मेरी उण की प्रीत पुराणी, उण बिनि पल न रहाऊँ।।
जहाँ बिठावे तितही बैठूँ, बेंचै तो बिक जऊँ।
मीराँ के प्रभु गिरिधर नागर, बार–बार बलि जाऊँ।।2 ।।

बदरा रे तू जल भरि ले आयौ।
छोटी–छोटी बूँदन बरसन लागी, कोयल सबद सुनायौ।
गाजै–बाजै पवन मधुरिया, अंबर बदराँ छायौ।
सेज सँवारी पिय घर आए, हिल–मिल मंगल गायौ।
मीराँ के प्रभु हरि अविनासी, भाग–भलौ जिन पायौ।।3 ।।

स्याम–बिना सखि, रह्याँ ना जावाँ।
तन–मन–जीवन प्रीतम वार्याँ, थारे रूप लुभावाँ।।
खानपान म्हाँने फीका लागाँ, नैना रह्याँ मुरझावाँ।
निसि दिन जोवाँ बाट मुरारी, कब रो दरसन पावाँ।।
बार–बार थारी अरज करूँ शूँ, रैन गया दिन जावाँ।
'मीराँ' रे हरि थें मिल्या बिन, तरस–तरस जिय जावाँ।।4।।

जोगी मत जा, मत जा, मत जा।
पाँइ परू, मैं चेरी तेरी हौं, जोगी मत जा, मत जा।।
प्रेम–भगति कौ पैड़ौ ही न्यारौ, हमकूँ गैल बता जा।
अगर चँदण की चिता बनाऊँ, अपणे हाथ जला जा।।जोगी।।
जल–बल भई भई भसम की ढेरी, अपने अंग लगा जा।
मीराँ कहै प्रभु गिरिधर नागर,
जोत में जोत मिला जा।।जोगी।। 5।।

*****

शब्दार्थ एवं भावार्थ

मैं गिरिधर के घर जाऊँ .... बार–बाार बलि जाऊँ।

शब्दार्थ : म्हारो = मेरा। रैण = रात। वाके = उसके। तिहती = वहीं। बेचै = बेचै।

मीरा कहती है कि वह गिरिधर के घर जाती है। वही

उसके सच्चे प्रियतम हैं। वह उनका मधुर रूप देखकर लुभा जाती है। रात होते ही वह उनके पास उठकर चली जाती है और भोर (प्रातःकाल) होते ही वहाँ से उठकर चली जाती है। वह दिन–रात उनके साथ (प्रातःकाल) खेलती है और जैसे भी बन पड़ता है, उन्हें रिझाती (खुश करती) है। कृष्ण जो पहनाते हैं, मीरा वही पहनती है और जो वे देते हैं वह वही खाती है। कृष्ण के साथ उसका प्यार पुराना है वह उनके बिना एक पल भी नहीं रह सकती है। कृष्ण उसे जहाँ बिठाये मीरा वहीं बैठेगी। यहाँ तक कि यदि कृष्ण उसे बेचे तो वह बिक जाय। गिरिधर ही मीरा के प्रभु हैं। वह उन पर अपने–आपको बार–बार न्यौछावर (अर्पण) करती है।

विशेष : मीरा का समर्पण भाव, प्रेम भाव की भक्ति का चित्रण है। प्रेम ने अपनी गहनता और अतिशयता में दाम्पत्य रूप धारण कर लिया है। तभी तो मीरा रात्रि होते ही कृष्ण के पास चली जाती है प्रातःकाल (भोर) होते ही उठकर चली आती है। सान्निध्य प्रेम का लक्षण है। इसीलिए मीरा जैसे भी संभव है वैसे कृष्ण को रिझाती है। मीरा का समर्पण भाव भी वर्णनातीत है। कृष्ण की हर इच्छा वह पूरी करना चाहती है, यहाँ तक कृष्ण उसे बेचे तो भी वह बिक जाने के लिए भी नहीं हिचकाती।

बहरा रे तू .... जिन पायौ।

शब्दार्थ : बदरा = बादल। अंबर = आसमान। भाग भलौ जिन पायौ = पाने वाला का भाग्य बड़ा है।

अपने आराध्य देव श्रीकृष्ण के अपने घर आगमन के प्रासंगिक अवसर का वर्णन करते हुए मीरा कहती है कि

बादल रै! तुम जल भरकर ले आये हो। छोटी – छोटी बूँदें बरसने लगी है। कोयल मधुस्वर में गाने लगी है। बहते पवन से गाजे– बाजे का सा स्वर निकल रहा है। आसमान में बादल छाये हैं। मीरा ने घर में पिया के लिए सेज सँवार कर रखा था और वे घर आ गये हैं। उनके आगमन पर सभी सुहागिनें हिल मिलकर गा रही हैं। मीरा के प्रभु तो अविनाशी हैं। उसका भाग्य बहुत प्रबल था कि उसने अपने अविनाशी प्रियतम को पाय लिया है।

विशेष : मीरा का कृष्ण के प्रति प्रिय और पूज्य भाव दोनों भावों का सम्मिलित रूप है। मीरा की प्रसन्नता प्रकृति के कण–कण में प्रतिबिंब हुई है।

स्याम बिन सखी .... जिय जावाँ।

शब्दार्थ : वार्‍या = अर्पित करना। तारे रूप = तुम्हारा सौंदर्य। म्हाँने = हमें।

इस पद में कृष्ण के वियोग में अपनी बेचैनी अपनी सखी से व्यक्त करती हुई मीरा कहती है कि स्याम के बिना उससे अब रहा नहीं जाता। अपने प्रियतम के रूप में वह आकृष्ट है और उसने अपना तन–मन–जीवन सब उन पर अर्पित कर दिया है। खान–पान उसे फीका लगता है और उसकी आँखें मुरझाई रहती है। वह रात–दिन कृष्ण की राह देखती रहती है, पता नहीं कब उसे कृष्ण के दर्शन हों। वह कृष्ण से बार–बार निवेदन करती है कि रात तो बीत गयी, दिन भी बीता जा रहा है। कृष्ण के बिना मीरा का जीवन तरस–तरस कर बीता जा रहा है।

विशेष : इस पद में कृष्ण के वियोग में मीरा की बेचैनी

प्रदर्शित है। सारे आकर्षण वियोग के समय में प्रतिकूल और दु:खदायी लगते हैं। मीरा के वियोग की चरमसीमा का चित्रण है।

जोगी मत जा .... जोत में जोत मिल जा।।

शब्दार्थ : चेरी = दासी। पैंड़ों = मार्ग। गैल = रास्ता। ज्योत = ज्योति। पाँई = पैर। चंदण = चंदन।

हे योगी! तू मत जा। मैं तेरी दासी हूँ और तेरे पैरों में पड़कर यह विनती कर रही हूँ। प्रेम – भक्ति का मार्ग ही अगल है, उसे समझना आसान काम नहीं है, इसलिए मुझे वह मार्ग बता दें, अर्थात् प्रेम–भक्ति की ओर अग्रसर कर दे। मैं तेरे विरह में इतनी दु:खी हूँ कि जीना नहीं चाहती। इसलिए मैंने अगर (सुगंधित पदार्थ) और चंदन की चिता बनायी है। तू स्वयं अपने ही हाथों से इसमें आग लगा दे। मैं जब उस चिता में जलकर राख की ढ़ेरी बन जाऊँ तो तू मुझे अपने शरीर पर लगा लेना। मीरा कहती है कि हे प्रभु गिरिधरनागर! ज्योति में ज्योति मिला लें अर्थात् मैं तेरा ही एक अंश हूँ, इसलिए इस अंश को भी अपने में ही समा ले।

*****

मातृ मंदिर में

सुभद्राकुमारी चौहान
(1904 – 1948)

कवि परिचय

बीसवीं शताब्दी में वीर भाव की एकैक कवयित्री के रूप में चिरस्मरणीय श्रीमती सुभद्राकुमार का जन्म इलाहाबाद में प्रयाग के सम्भ्रान्त क्षत्रिय कुल में सन् 1904 में हुआ। पति ठाकुर लक्ष्मणसिंह चौहान के साथ सुभद्रा जी ने राष्ट्रीय आन्दोलनों में भाग लिया था। इस हेतु उन्होंने कॉलेज की पढ़ाई को भी अधुरा छोड़ दिया था। 'कर्मवीर' पत्रिका के संपादक तथा राष्ट्रीयता के गायक माखनलाल चतुर्वेदी के प्रोत्साहन से सुभद्राकुमारी की प्रतिभा निखर उठी। राजनीतिक आन्दोलनों में भाग लेने के परिणाम स्वरूप सुभद्रा जी कई बार जेल भी गईं थीं। देश के स्वतन्त्र होने पर ये मध्यप्रदेश के धारासभा की सदस्या रहीं। दुर्भाग्यवश एक मोटर दुर्घटना से अल्पायु में श्रीमती चौहान का देहान्त हो गया।

यद्यपि सुभद्राकुमारी ने वात्सल्य एवं दाम्पत्य प्रेम से सम्बन्धित कविताएँ भी यथेच्छ मात्रा में लिखी हैं, फिर भी उत्कृष्ट देशानुराग व राष्ट्रभक्ति के गीतों कर रचना में इन्हें अधिक सफलता मिली है। 'झाँसी की रानी', 'जलियाँवाला बाग', 'वीरों का कैसा हो वसन्त' जैसी कविताओं में कवयित्री

की ओजस्वी और स्फूर्तिदायक भाषा द्वारा भारतीय विगत शौर्य के चित्र प्रखर हो उठे हैं। 'मुकुल', 'त्रिधारा', 'बुन्देलों हरबोलों के मुँह' आदि में सुभद्राकुमारी की कविताएँ संगृहित हैं। 'बिखरे मोती', 'उन्मादिनी' और 'सीधे–सादे चित्र' इनकी कहानियों के संग्रह हैं। 'मुकुल' काव्य–संग्रह को साहित्य सम्मेलन, प्रयाग की ओर से सेक्सरिया पुरस्कार प्रदान किया गया था। सुभद्राकुमारी जी ने बहुत कम लिखा है। परन्तु अनुभूति की सादगी व अभिव्यक्ति की सहजता के कारण राष्ट्रीय धारा के काव्य क्षेत्र में इनका स्थान अप्रतिम माना गया है।

जलियाँवाला बाग की वारदात भारतीय स्वाधीनता आन्दोलन के इतिहास की अत्यन्त दर्दनाक घटना है। अंग्रेजों की दमननीति के फलस्वरूप इस भीषण काण्ड में अनगिनत भारतीय सेनानी और देशभक्तों ने अपने प्राणों की आहुति दी। बालक–वृद्ध, स्त्री–पुरुष का अन्तर भूलकर आजादी की बलिवेदी पर शहीद होने वालों के प्रति सुभद्रा जी की गौरव इस कविता में अभिव्यक्त हुई है। सुभद्रा जी वसन्त ऋतु से प्रार्थना करती हैं कि उन हुतात्माओं की स्मृति में श्रद्धा के फूल अर्पित किये जाए। वसन्त से उनका अनुरोध है कि वह मन्द चाल से नीरवता की साज में आए ताकि इस शोक–स्थल का शान्ति भंग न हो।

कविता की शैली सरल और सरस है। वीर–भाव व्यंजक इस कविता में शब्दों के वाग्विलास की अपेक्षा एक पवित्र करुणाजनक संवेदना का सहज–स्वाभाविक प्रकाशन हुआ है।

*****

मातृ मंदिर में

वीणा बज–सी पड़ी खुल गये नेत्र और कुछ आया ध्यान।
मुड़ने की थी देर, मिल गया उत्सव का प्यारा सामान।।
जिसको तुतला–तुनला करके शुरू किया था पहिली बार।
जिस प्यारी भाषा में हमको प्राप्त हुआ माँ का प्यार।।
उस हिन्दू जन की गरीबनी हिन्दी, प्यारी हिन्दी का।
प्यारे भारतवर्ष कृष्ण की ही उस बीणा कालिन्दी का।।
है उसका ही समारोह यह, उसका ही उत्सव प्यारा।
मैं आश्चर्य भरी आँखों से देख रही हूँ यह सारा।।
जिस प्रकार कंगाल बालिका अपनी माँ धनहीना को।
टुकड़ों की मुहताज आज तक दुखनी को उस दीना का।।
सुन्दर वस्त्राभूषण सज्जित देख चकित हो जाती है।
सच है या केवल सपना है कहती है रुक जाती है।।
पर सुन्दर लगती इच्छा यह होती है कर लें प्यार।
प्यारे चरणों पर बलि जाये कर ले मन भर के मनुहार।।
इच्छा बल हुई माता के पास दौड़ कर जाती है।
वस्त्रों को सँवारती उसको आभूषण पहनाती है।।
उसी भाँति आश्चर्य–मोद–मय आज मुझे झिझकाता है।
मन में उमड़ा हुआ भाव बस मुँह तक आ रूक जाता है।।
प्रेमोन्मत्ता होकर तेरे पास दौड़ आती हूँ मैं।
तुझे सजाते या सँवारने में ही सुख पाती हूँ मैं।।
तेरी इस महानता में क्या होगा मूल्य सजाने का।
तेरी भव्यमूर्ति को नकली आभूषण पहनाने का।।
किन्तु क्या हुआ माता मैं भी तो हूँ तेरी ही सन्तान।
इसमें ही सन्तोष मुझे है, इसमें ही आनन्द महान।।

मुझ सीस एक–एक की बन तू तीस कोटि की आज हुई।
हुई, महान् सभी भाषाओं की तू ही सिरताज हुई।।
मेरे लिए बड़े गौरव की और गर्व की है यह बात।
तेरे द्वारा ही होवेगा भारत में स्वातंत्र्य प्रभात।।
अपने ब्रत पर मर मिट जाना यह जीवन तेरा होगा।
जगती के वीरों द्वारा शुभ–वन्दन तेरा होगा।।
तू होगी आधार देश की पार्लियामेंट बन जाने में।
तू होगी सुख–सार देश के बिछुड़े हृदय मिलाने में।।

*****

दु:ख

महादेवी वर्मा
जन्म : 1907 ई. – मृत्यु: 1987 ई

कवि परिचय

काव्यगत विशेषताएँ : आधुनिक मीरा के नाम से प्रसिद्ध रहस्यवादी कवयित्री महादेवी वर्मा की रचनाओं में भावों की तीव्रता एवं विरह वेदना के दर्शन होते हैं। महादेवीजी किसी अज्ञात परम तत्व के प्रति समर्पित हैं, जो सृष्टि का मूल कारण है, यही उनका रहस्यवादी दृष्टिकोण है। भावों के धरातल पर वे अपने प्रियतम से मिलना चाहती हैं। प्रकृति और सौंदर्य का अकन, मानवीयता, व्यथा, संवेदना, कारुणिकता एवं अनन्यता इनकी कविताओं के प्राण तत्व हैं। इसकी कविताएँ गेय हैं। गीतात्मकता, शब्द लालित्य एवं माधुर्य उनकी भाषागत विशेषताएँ हैं।

रचनाएँ : नीहार, रश्मि, नीरजा, सान्ध्य गीत, यामा, दीपशिखा आदि प्रमुख रचनाएँ हैं।

*****

दुःख

रजत रश्मियों की छाया में
धूमिल घन सा वह आता;
इस निदाघ से
मानस में करुणा
के स्त्रोत बहा जाता!
उसमें मर्म छिपा
जीवन का,
एक तार अगणित कम्पन का,
एक सूत्र
सब के बन्धन का,
संसृति के सूने
पृष्ठों में करुण काव्य
वह लिख जाता!
वह उर में
आता बन पाहुन,
कहता मन से,
'अब न कृपण बन', मानस की
निधियाँ लेता गिन,
दृग–द्वारों को
खोल विश्व भिक्षुक पर,
हँस बरसा आता!
यह जग
है विस्मय से निर्मित,
मूक पथिक आते जाते नित,

नहीं प्राण प्राणों से परिचित,
यह उनका संकेत नहीं
जिसके
बिन विनिमय हो पाता!
मृगमरीचिका के चिर पथ पर,
सुख आता प्यासों के पग धर,
रुद्ध हृदय के
पट लेता कर;
गवित कहता
'मैं मधु हूँ मुझसे क्या पतझर का नाता'!
दुख के पद
छू बहते झर झर,
कण कण से
आँसू के निर्झर,
हो उठता जीवन
मृदु उर्वर,
लघु मानस में
वह असीम जग को
आमन्त्रित कर लाता!

*****

जो बीत गई

हरिवंश राय 'बच्चन'

कवि परिचय

हिन्दी साहित्य में हालावाद के जनक कवि श्री हरिवंश राय बच्चन का जन्म 27 नवम्बर 1907 इलाहाबाद (उत्तर प्रदेश) में हुआ। छायावाद युग की शीर्षस्थ विकसित स्थिति में ही इन्होंने हिन्दी कविता को एक नई दिशा दी। अंग्रेजी में एम.ए. की उपाधि प्राप्त कर इन्होंने शिक्षा जगत से सम्बन्ध स्थापित किया। इनका प्रारम्भिक जीवनकाल अत्यन्त कष्ट और अभाव में बीता। भारतीय स्वतंत्रता संग्राम के असहयोग आन्दोलन से जुड़े होने के कारण उन्हें जेल यात्रा भी करनी पड़ी। इनकी काव्य प्रतिभा अन्तर्मुखी है। प्रकृति और जीवन के बिम्ब–प्रतिबिम्ब भाव को व्यंजना और लाक्षणिक वक्रता के साथ अभिव्यंजित करने वाली छायावादी काव्यधारा का प्रवाह इनहें पसन्द नहीं पड़ा। निजी जीवनानुभूतियों से जुड़कर जीने वाले मानवीय भावनाओं का चित्रण ही इनके काव्य का लक्ष्य है। प्रेम और मस्ती मानव जीवन की एक ऐसी परम्परित स्थिति है जिसका स्वरूप प्रायः स्थिर है। इसमें प्रवेश करने वाले लोक चतुर नहीं होते। आत्मकेन्द्रित रहकर ऐसे कवि विषय जनित उपलब्धियों की सत्यानुभूतियों की अभिव्यंजना ही अपना लक्ष्य मानते हैं।

बच्चन जी की रचनाएँ : मधुशाला, मधुबाला और

मधुकलश नामक काव्य संग्रहों में प्रकाशित हैं। कवि ने इनमें 'हालावाद' की विशेष प्रवृत्ति को हिन्दी कविता में स्थान दिया है। यह हिन्दी की एक नई भाव–भूमि तथा नई काव्य शैली है। मधुपान करने वाले मधु से, मधुकलश से, प्याले से इस तरह जुड़े होते हैं कि उन्हें धर्म–भेद, जाति–भेद, तथा घर के दायित्वों तक से कोई लगाव नहीं होता। वे आत्मकेन्द्रित हों, मस्ती में जीते हैं। उसी प्रकृति के पत्नी या प्रिया में केन्द्रित हो जीने वाले व्यक्ति भी हुआ करते हैं। बाह्य संसार की अनुभूतियाँ उनके एकान्तिक प्रेम का स्पर्श तक नहीं कर पातीं। बच्चन जी के हालावाल पर उमर खय्याम की रुबाइयों का असर माना जाता है। इनके कुछ गीत अपने दाम्पत्य जीवन की मधुर स्मृतियों से जुड़े हैं। पहली पत्नी के देहावसान से आहत कवि ने अपनी भावनाओं को गीतों में व्यक्त करने की चेष्टा की है। इनके अध्ययन से प्राप्त सरसता अनुभूतियों की शुद्धता के कारण मानवीय भावनाओं के संबुद्धिजन्य उद्गार हैं।

वियोगी होगा पहला कवि,
आह से उपजा होगा गान
उमड़कर आँखों से चुपचाप
बही होगी कविता अनजान।

–की संधारणा व्यक्त करके कविवर पन्त ने कविता की जिस नैसर्गिक भूमि की प्रेरणा दी है, बच्चन जी के निजी जीवन की कविताओं में भी आह और प्यार की मुखर अनुभूतियाँ हैं, प्रेम की पीड़ा है, अभाव–जनित कचोट है। कवि ने भाव के स्तर से विवेक का भी आश्रय ग्रहण किया है।

सरल भाषा में हृदय के नैसर्गिक उद्गारों की अत्यन्त

ही सरस अभिव्यक्ति की नई प्रणाली का आविष्कार करके बच्चन जी ने खड़ी बोली की अभिव्यंजना शक्ति को अभिधा के सौन्दर्य से मंडित किया है। भावना पर विवेक का अंकुश लगाना इनकी वैचारिक विशिष्टता है। मस्ती के सामाजिक महत्व को भी इन्होंने बड़ी सहजता से अभिव्यक्त किया है –

'बैर कराते मन्दिर मस्जिद, मेल कराती मधुशाला।'

निधन : 18 जनवरी 2003 ई.।

*****

जो बीत गई

जो बीत गई सो बात गई!
जीवन में एक सितारा था,
माना, वह बेहद प्यारा था।
वह डूब गया तो डूब गया,
अम्बर के आनन को देखो,
कितने इसके तारे टूटे,
कितने इसके प्यारे छूटे,
जो छूट गए फिर कहाँ मिले,
पर बोलो टूटे तारों पर
कब अम्बर शोक मनाता है!
जो बीत गई सो बात गई!

[2]

जीवन में वह था एक कुसुम,
थे उस पर नित्य निछावर तुम,
वह सूख गया तो सूख गया,
मधुवन की छाती को देखो,
सूखी कितनी इसकी कलियाँ,
मुरझाई कितनी वल्लरियाँ,
जो मुरझाईं फिर कहाँ खिलीं
पर बोला सूखे फूलों पर,
कब मधुवन शोर मचाता है!
जो बीत गई सो बात गई!

[3]

जीवन में मधु का प्याला था,
तुमने तन–मन दे डाला था,
वह टूट गया तो टूट गया,
मदिरालय का आँगन देखो,
कितने प्याले हिल जाते हैं,
गिर मिट्टी में मिल जाते हैं,
जो गिरते हैं कब उठतें हैं,
पर बोलो टूटे प्यालों पर,
कब मदिरालय पछताता है!
जो बीत गई सो बात गई!

[4]

मृदु मिट्टी के हैं बने हुए,
मधुघट फूटा ही करते हैं,
लघु जीवन लेकर आए हैं,
प्याले टूटा ही करते हैं,
फिर भी मदिरालय के अन्दर
मधु के घट हैं, मधु प्याले हैं,
जो मादकता के मारे हैं,
वे मधु लूटा ही करते हैं,
वह कच्चा पीने वाला है
जिसकी ममता घट–प्यालों पर
जो सच्चे मधु से जला हुआ
कब रोता है, चिल्लाता है!
जो बीत गई सो बात गई!

*****

मन्दिर

जयशंकर प्रसाद

कवि परिचय

श्री जयशंकर प्रसाद आधुनिक हिन्दी कविता में 'छायावादी काव्य आन्दोलन' के जनक, प्रवक्ता और उन्नायक है। उन्होंने खड़ी बोली को काव्य–भाषा के रूप में अनिर्णय के प्रथम दौर से मुक्त करके उसे अद्‌भुत रूप से समृद्ध और अभिव्यक्ति सम्पन्न बनाया। उनकी काव्य–भाषा में गहरी अनुभूति सम्पन्नता और रोमांसलता का एक सांस्कारिक तेवर विद्यमान है। गोस्वामी तुलसीदास की तरह प्रसाद भाषिक संक्षिप्तता और बिम्बात्मक क्षमता का मर्म पहचानने वाले कवि हैं।

'गीति तत्व' प्रसाद की कविता का दूसरा प्रमुख गुण है। अनुभूतियों की भीतरी झनझनाहट उनके गीतों से लेकर उनके महाकाव्य 'कामायनी' तक में समान रूप से विद्यमान है। प्रसाद अपनी कविताओं के माध्यम से मनुष्य जाति की उन्हीं अनुभूतियों को चित्रित करते हैं जिनमें एक भीतरी करुणा का आवेश हो और जो शब्द का स्पर्श पाते ही संगीत की प्राणवत्ता से झंकृत हो उठें। 'झरना', 'आँसू' और 'लहर' के गीत इसका प्रमाण तो हैं ही, 'कामायनी' की संपूर्ण अर्थवत्ता इसी गोत्यात्मक अनुगूंज से भरी हुई है।

प्रसाद का काव्य अपने सारे ऐतिहासिक, दार्शनिक

ओर 'मिथकीय' आवरण के बावजूद अपने वर्तमान में ही प्रामाणिक है। इतिहास, दर्श और पुराण–कथाओं का उपयोग प्रसाद जी ने अपनी सांस्कृतिक धरोहर को पुनरुजीवित करने के लिए तो किया ही है, उसके माध्यम से अपने समय के भारतीय राष्ट्रीय स्वतंत्रता आन्दोलन के मुख्य तेवर को पहचानने का काम भी वे करते हैं। इसीलिए उनकी कविताओं में राष्ट्रीयता का एक गहरा सरोकार विद्यमान है

*****

मन्दिर

जब मानते हैं व्यापी जलभूमि में अनिल में
तारा–शशांक में भी आकाश में अनल में
फिर क्यों ये हठ है प्यारे ! मन्दिर में वह नहीं है
वह शब्द जो 'नहीं' है, उसके लिए नहीं है
जिस भूमि पर हजारों हैं सीस को नवाते
परिपूर्ण भक्ति से वे उसको वहीं बताते
कहकर सहस्त्र मुख से जब है वही बताता
फिर मूढ़ चित्त को है यह क्यों नहीं सुहाता

अपने हि आत्मा को सब कुछ जो जानते हो
परमात्मा में उसमें नहि भेद मानते हो जिस
पंचतत्त्व से है यह दिव्य देह–मन्दिर
उनमें से ही बना है यह भी तो देव मन्दिर
उसका विकास सुन्दर फूलों में देख करके

बनते हो क्यों मधुव्रत आनन्द–मोद भरके
इसके चरण कमल से फिर मन को क्यों हटाते
भव–ताप–दग्ध हिय को चन्दन नहीं चढ़ाते
प्रतिमा हि देख करके क्यों भाल में है रेखा
निर्मित किया किसी ने इसको, यही है लेखा
हर–एक पत्थरों में वह मूर्ति ही छिपी है
शिल्पी ने स्वच्छ करके दिखला दिया, वही है
इस भाव को हमारे उसको तो देख लीजे
घरता है वेश वोही जैसा कि उसको दीजे
यों ही अनेक–रूपी बनकर कभी पुजाया
लीला उसी की जग में सबमें वही समाया

मस्जिद, पगोडा, गिरजा, किसको बनाया तूने
सब भक्त–भावना के छोटे–बड़े नमूने
सुन्दर वितान कैसा आकाश भी तना है
उसका अनन्त मन्दिर, यह विश्व ही बना है।

*****

अकाल दर्शन

सुदामा पाण्डेय उर्फ धूमिल

कवि परिचय

सुदामा पाण्डेय उर्फ धूमिल का जन्म 9 नवम्बर, 1936 में बनारस के एक नजदीक के गाँव खेळली (पाण्डेयपुर) में एक निम्न मध्यवर्गीय किसान परिवार में हुआ था। हाई स्कूल की मामूली शिक्षा प्राप्त करने के बाद वे रोटी की तलाश में कलकत्ता पहुँचे और वहाँ मजदूरों के साथ लोहा ढोने का काम करने लगे।

बाद में वे एक व्यावसायिक फर्म 'मेसर्स तलवार ब्रदर्स प्राइवेट लिमिटेड' में काम करते हुए डेढ़ वर्ष तक भारत के विभिन्न जंगलों और पहाड़ी इलाकों में घूमते रहे। कठोर श्रम करने के बावजूद मालिकों का व्यवहार उनके साथ अच्छा नहीं था, क्योंकि वे बहुत ही स्वतंत्र प्रकृति के व्यक्ति थे, और भीतर से कहीं बहुत अधिक क्रान्तिकारी भी।

सन् 1958 में वे अपनी प्रकृति के विरुद्ध सरकारी नौकरी में आए आई.आई.टी. – वाराणसी में इन्सट्रक्टर के पद पर बहाल हुए। प्रतिशोध की भावना से कई बार उनका तबादला सहारनपुर (उ.प्र.) में किया गया। गरीबी और पारिवारिक कठिनाइयों तथा कई मुकदमों के कारण वे बहुत परेशान रहे।

धूमिल क्रुद्ध पीढ़ी के मोहभंग के कवि हैं। यद्यपि वे पूरी तरह नास्तिक थे, पर उनमें मानव भविष्य और राष्ट्र के

प्रति गहन आस्था का स्वर है। उनकी कविताओं में सामान्य जन के लिए गहरी पीड़ा और दर्द के भाव हैं। जीवनपर्यन्त उन्हें एक 'हत्यारी सम्भावना' ने ग्रसित कर रखा था। वर्तमान प्रजातांत्रिक व्यवस्था से असंतुष्ट होकर वे किसी दूसरे प्रजातंत्र की तलाश में थे। सम्भवतः वे 'सुदामा पाण्डेय का प्रजातंत्र' नाम की किसी लम्बी कविता की रचना की तैयारी कर रहे थे। धूमिल का साहित्य वस्तुतः समाज के निचले वर्गों की संवेदनाओं, भावनाओं और भाषा की अभिव्यक्ति का साहित्य है।

रचनाएँ : कविता संकलन—संसद से सड़क तक और कल सुनना मुझे। इनके अतिरिक्त इनकी राजनीतिक टिप्पणियाँ, साहित्यिक नोट्स, कुछ अन्य अप्रकाशित कविताएँ, कविता पर एक वक्तव्य तथा 'धूमिल की डायरी से' कुछ पत्र आदि सामग्रियाँ 'परिक्षेत्र' के धूमिल विशेषांक में प्रकाशित हैं। निधन : 10 फरवरी, 1975 हुई।

*****

अकाल दर्शन

भूख कौन उपजाता है :
वह इरादा जो तरह देता है।
या वह घृणा जो आँखों पर पट्टी बाँधकर
हमें घास की सट्टी में छोड़ आती है ?

उस चालाक आदमी ने मेरी बात का उत्तर
नहीं दिया।
उसने गलियों और सड़कों और घरों में
बाढ़ की तरह फैले हुए बच्चों की ओर इशारा किया
और हँसने लगा।

मैंने उसका हाथ पकड़ते हुए कहा –
'बच्चे तो बेकारी के दिनों की बरकत हैं'
इससे वे भी सहमत हैं
जो हमारी हालत पर तरस खाकर,
खाने के लिए रसद देते हैं।
उनका कहना है कि बच्चे
हमें बसंत बनने में मदद देते हैं।

लेकिन यही वे भूलते हैं
दरअसल, पेड़ों पर बच्चे नहीं
हमारे अपराध फूलते हैं
मगर उस चालाक आदमी ने

मेरी किसी बात का उत्तर
नहीं दिया और हँसता रहा,
हँसता रहा, हँसता रहा
फिर जल्दी से हाथ छुड़ाकर
'जनता के हित में' स्थानान्तरित
हो गया।

मैंने खुद को समझाया – यार!
उस जगह खाली हाथ जाने से इस तरह
क्यों झिझकते हो?
क्या तुम्हें किसी का सामना करना है?
तुम वहाँ कुआँ झाँकते आदमी की
सिर्फ पीठ देख सकते हो।

और सहसा मैंने पाया कि मैं खुद अपने सवालों के
सामने खड़ा हूँ और
उस मुहावरे को समझ गया हूँ,
जो आजादी और गांधी के नाम पर चल रहा है
जिससे न भूख मिट रही है,
न मौसम बदल रहा है।

लोग बिलबिला रहे हैं (पेड़ों को नंगा करते हुए)
पत्ते और छाल खा रहे हैं
मर रहे हैं, दान कर रहे हैं।
जलसों– जुलूसों में भीड़ की
पूरी ईमानदारी से

हिस्सा ले रहे हैं और
अकाल को सोहर की तरह गा रहे हैं।
झुलसे हुए चेहरों पर कोई चेतावनी नहीं है।

मैंने जब भी उनसे कहा है देश शासन और राशन....
उन्होंने मुझे टोक दिया है।
अक्सर, वे मुझे अपराध के असली मुकाम पर
अँगुली रखने से मना करते हैं।
जिनका आधे से ज्यादा शरीर
भेड़ियों ने खा लिया है।
वे इस जंगल की सराहना करते हैं
'भारतवर्ष नदियों का देश है।'

बेशक, यह खयाल ही उनका हत्यारा है।
यह दूसरी बात है कि इस बार
उन्हें पानी ने मारा है।

मगर वे हैं कि असलियत नहीं समझते।
अनाज में छिपे 'उस आदमी' की नीयत
नहीं समझते
जो पूरे समुदाय से
अपनी ग़िज़ा वसूल करता है
कभी 'गाय' से
और कभी 'हाय' से

'यह सब कैसे होता है' मैं उन्हें समझाता हूँ
मैं उन्हें समझाता हूँ–
वह कौन–सा प्रजातांत्रिक नुस्खा है
कि जिस उम्र में
मेरी माँ का चेहरा
झुर्रियों की झोली बन गया है
उसी उम्र की मेरे पड़ोस की महिला के चेहरे पर
मेरी प्रेमिका के चेहरे सा लोच है।

वे चुपचाप सुनते हैं।
उनकी आँखों में विरक्ति है
पछतावा है; संकोच है
या क्या है कुछ पता नहीं चलता।
वे इस कदर पस्त हैं
कि तटस्थ हैं।
और मैं सोचने लगता हूँ कि इस देश में
एकता युद्ध की और दया
अकाल की पूँजी है।
क्रान्ति –
यहाँ के असंग लोगों के लिए
किसी अबोध बच्चे के
हाथों की जूजी है।

*****

पेड़

सच्चिदानन्द हीरानन्द वात्स्यायन 'अज्ञेय'

कवि परिचय

अज्ञेय का जन्म देवरिया जनपद के कसिया नामक स्थान पर 7 मार्च 1911 को हुआ था। इनका पूरा नाम सच्चिदानन्द वात्स्यायन 'अज्ञेय' है, जिसमें पिता का नाम हीरानन्द भी इन्होंने जोड़ लिया था। इनके पिता पं. हीरानन्द शास्त्री पुरातत्त्व विभाग में एक उच्च अधिकारी थे। अज्ञेय के पूर्वज पंजाब के निवासी भणोत सारस्वत ब्राह्मण थे। इनके दादा संस्कृत के प्रकांड पंडित थे।

अज्ञेय की शिक्षा–दीक्षा कुल परम्परानुकूल रटंत पद्धति से आरम्भ हुई।इन्होंने 1925 ई. में पंजाब में मैट्रिक की परीक्षा पास की। तदुपरान्त ये इंटरमीडिएट के लिए मद्रास क्रिश्चियन कॉलेज में दाखिल हुए तथा 1927 ई. में आई.एस.सी. की परीक्षा पास कर पुनः पंजाब में लाहौर के फॉरमैन कॉलेज में इन्होंने बी.एससी. में नाम लिखाया। 1929 ई. में इन्होंने बी.एस–सी. की परीक्षा उत्तीर्ण की। अज्ञेय की पहली कविता लाहौर की कॉलेज पत्रिका में छपी थी, जो अब उनके दूसरे कविता संग्रह 'चिन्ता' में संग्रहित है। इनका पहला काव्य–संग्रह 'भग्नदूत' (1933 ई.) है। 'भग्नदूत' और 'चिन्ता' की छायावादी कविताओं से अपनी काव्य–यात्रा प्रारम्भ करने वाले अज्ञेय प्रयोगवाद और नई

कविता के विशिष्ट कवि हैं।

'तारसप्तक' की कविताओं के साथ अज्ञेयजी की नई काव्य–यात्रा आरम्भ होती है। 'हरी घास पर क्षण भर' (1949), 'बावरा अहेरी' (1954), और 'इन्द्र धनु रौंदे हुए ये' (1957), रचनाओं में अज्ञेय की व्यक्ति चेतना निरन्तर एक दर्शन के रूप में संघटित होती दिखाई देती है। 'आँगन के पार द्वार' (1961) तक आते–आते अज्ञेय का व्यक्ति–चिन्तन भारत के विभिन्न धार्मिक सम्प्रदायों की तत्त्व–विचार सम्बन्धी अवधारणाओं के सार को अपने मनोनुकूल ढालकर एक नया दर्शन खड़ा करता है।

अज्ञेय ने कई पत्र–पत्रिकाओं का सम्पादन भी किया। ये कुछ महीनों तक आगरा से प्रकाशित होने वाले 'सैनिक' के सम्पादक मंडल में रहे। 1937 के अन्त में पंडित बनारसीदास चतुर्वेदी के आग्रह पर ये 'विशाल भारत' के सम्पादक मंडल में आए। कोई डेढ़ वर्ष बाद व्यक्तिगत कारणों से इन्होंने 'विशाल भारत' छोड़ दिया और कुछ दिनों तक पटना से प्रकाशित होने वाले 'बिजली' का सम्पादन किया। फिर मार्च 1947 ई. में इन्होंने इलाहाबाद को अपना निवास बनाया और 'प्रतीक' नामक मासिक पत्रिका का सम्पादन आरम्भ किया। 'प्रतीक' अपने जमाने की बहुत ही उल्लेखनीय पत्रिका थी, जिसके माध्यम से हिन्दी के अनेक युवा कवि, कहानीकार, निबन्धकार और आलोचक प्रकाश में आए। फरवरी, 1965 में अज्ञेयजी ने 'दिनमान' साप्ताहिक पत्र का सम्पादन आरम्भ किया और अपनी निष्ठा के बल पर छह महीने के भीतर इसे हिन्दी का अन्यतम साप्ताहिक पत्र बना दिया।

अज्ञेय को 1971 ई. में विक्रम विश्वविद्यालय, उज्जैन ने डी.लिट्. की मानद उपाधि प्रदान की। इसके एक साल पहले हिन्दी साहित्य सम्मेलन, प्रयाग इन्हें 'विद्यावाचस्पति' की उपाधि से सम्मानित कर चुका था। 1972 में उ.प्र. हिन्दी साहित्य सम्मेलन ने इन्हें 'विद्यावारिधि' की उपाधि प्रदान की। 1979 में अज्ञेय भारतीय ज्ञानपीठ पुरस्कार से सम्मानित किए गए तथा 28 अगस्त 1983 को इन्हें युगोस्लाविया का प्रसिद्ध अन्तर्राष्ट्रीय पुरस्कार 'स्वर्णमाल' दिया गया। 04 अप्रेल 1987 को इनका स्वर्गवास हो गया।

प्रकाशित साहित्य

काव्य : भग्नदूत, चिन्ता, इत्यलम्, हरी घास पर क्षण भर, बावरा अहेरी, इन्द्र धनु रौंदे हुए ये, अरी ओ करुणा प्रभामय, आँगन के पार द्वार, कितनी नावों में कितनी बार, क्योंकि मैं उसे जानता हूँ, सागर मुद्रा, महावृक्ष के नीचे, पहले मैं सन्नाटा बुनता हूँ।

उपन्यास : शेखर एक जीवनी, नदी के द्वीप, अपने–अपने अजनबी

कहानी संग्रह : विपथगा, परम्परा, कोठारी की बात, शरणार्थी, जयदोल, ये तेरे प्रतिरूप। निबन्ध संग्रह : त्रिशंकु, आत्मनेपद, हिन्दी साहित्य : एक आधुनिक परिदृश्य, सबरंग और कुछ राग, भवंती, अन्तरा, लिखि कागद कोरे, जोग लिखी, अद्यतन, आल बाल संवत्सर। यात्रावृत्त : अरे यायावर रहेगा याद, एक बूँद सहसा उछली

*****

पेड़

मैंने कहा, ''पेड़, तुम इतने बड़े हो,
इतने कड़े हो,
न जाने कितने सौ बरसों के आँधी–पानी में
सिर ऊँचा किए अपनी जगह अड़े हो।
सूरज उगता–डूबता है, चाँद भरता–छीजता है
ऋतुएँ बदलती हैं, मेघ उमड़ता–पसीजता है,
और तुम सब सहते हुए
सन्तुलित शान्त धीर रहते हुए
विनम्र हरियाली से ढके, पर भीतर ठोठ कठैठे खड़े हो।''

काँपा पेड़, मर्मरित पत्तियाँ
बोलीं मानो, ''नहीं, नहीं, नहीं, झूठा
श्रेय मुझे मत दो!
मैं तो बार–बार झुकता, गिरता, उखड़ता
या कि सूख ठूँठ हो के टूट जाता,
श्रेय है तो मेरे पैरों तले इस मिट्‌टी को
जिसमें न जाने कहाँ मेरी जड़ं खोई हैं,
ऊपर उठा हूँ उतना ही आकाश में
जितना कि मेरी जड़ें नीचे दूर धरती में समाई हैं।

श्रेय कुछ मेरा नहीं, जो है इस नामहीन मिट्टी का।
और, हाँ इन सब उगने–डूबने, भरने–छीजने,
बदलने, मलने, पसीजने,
बनने–मिटने वालों का भी,
शतियों से मैंने बस एक सीख पाई है,
जो मरण–धर्मा हैं वे ही जीवनदायी हैं।''

*****

संयुक्त परिवार

राजेश जोशी

कवि परिचय

आपका जन्म 18 जुलाई 1946 को नरसिंहगढ़ मध्यप्रदेश में हुआ। आपने प्राणीशास्त्र में एम.एस.सी. और समाज शास्त्र में एम.ए. तथा जे.जे. आर्ट्स से ड्राइंग में इंटर सर्टीफिकेट किया।

आपकी पहली नौकरी उज्जैन के मॉडल मिडिल स्कूल में अध्यापक की लगी, इसके बाद रामपुरा, गौतमपुरा, देपालपुर शासकीय विद्यालयों तथा इन्दौर के इस्लामिया करीमिया स्कूल में अध्यापक रहे। कुछ दिन अखबारों में काम किया। 1967 से 2001 तक भारतीय स्टेट बैंक में कार्यरत रहने के बाद स्वैच्छिक अवकाश प्राप्त किया।

कविताओं का अनेक भारतीय और विदेशी भाषाओं में अनुवाद किया।

प्रकाशित कृतियाँ : कविता संग्रह : समरगाथा (1977 लम्बी कविता), एक दिन बोलेंगे पेड़ (1980), मिट्टी का चेहरा (1985), नेपथ्य में हँसी (1994), दो पंक्तियों के बीच (2000), चाँद की वर्तनी (2006), गेंद निराली मिठू की (1989 बच्चों के लिए कविताएँ)।

कहानी संग्रह : सोमवार और अन्य कहानियाँ (1982), कपिल का पेड़ (2001)। जादू जंगल (नाटक

1981), अच्छे आदमी (रेण की कहानी पर आधारित नाटक 1989), टंकारा का गाना (1989 नाटक, बंसी कौल के साथ सह लेखन), हमें जवाब चाहिए (1984 नुक्कड़ नाटक), पतलून पहिना बादल (1983 मायकोवस्की की कविताओं का अनुवाद), भूमि का कल्पतरू यह (भर्तृहरि की कविताओं की अनुरचना), एक कवि की नोटबुक (2004 आलोचना), समकालीनता और साहित्य (एक कवि की दूसरी नोटबुक 2010), किस्सा कोताह (आख्यान 2012)।

नागार्जुन संचयन, त्रिलोचन का कविता संग्रह ताप के ताए हुए दिन, शरद बिल्लौरे का कविता संग्रह तय तो यही हुआ था तथा नाटक अमरू का कुर्ता के साथ ही वर्तमान साहित्य के कविता अंक, नया पथ के निराला शताब्दी अंक का सम्पादन। इसलिए पत्रिका का कुछ वर्ष तक प्रकाशन तथा सम्पादन।

गुजरात के साम्प्रदायिक दंगों के विरूद्ध लिखी गई टिप्पणियों के चयन : तीसरी आवाज का सम्पादन।

सम्मान : मुक्तिबोध पुरस्कार (1978), माखनलाल चतुर्वेदी पुरस्कार (1985), श्रीकान्त वर्मा स्मृति सम्मान (1986), शमशेर सम्मान (1996), पहल सम्मान (1998), शिखर सम्मान (2002), जनकवि मुकुट बिहारी सरोज सम्मान (2012), साहित्य अकादमी पुरस्कार (2002)।

सम्प्रत्ति : स्वतंत्र लेखन।

*****

संयुक्त परिवार

मेरे आने से पहले ही कोई लौट कर चला गया है
घर के ताले में उसकी पर्ची खुसी है

आया होगा न जाने किस काम से वह
न जाने कितनी बातें रही होंगी मुझसे कहने को
चली गई हैं सारी बातें भी लौट कर उसी के साथ
रास्ते में हो सकता है कहीं उसने पानी तक न पिया

सोचा होगा शायद उसने कि यहीं मेरे साथ पिएगा चाय
कैसा लगता है इस तरह किसी का घर से लौट जाना

इस तरह कभी कोई नहीं लौटा होगा
बचपन से उस पैतृक घर से
वहाँ बाबा थे, दादी थीं, माँ और पिता थे
लड़ते–झगड़ते भी साथ–साथ रहते थे सारे भाई–बहन
कोई न कोई हर वक्त बना ही रहता था घर में
पल दो पल को बिठा ही लिया जाता था और हर आने वाले को
पूछ लिया जाता था गुड़ और पानी को
खबर मिल जाती थी बाहर गए आदमी की
ताला देखकर शायद ही कभी कोई लौटा होगा घर से

टूटने के क्रम में टूट चुका है बहुत कुछ, बहुत कुछ
अब इस घर में रहते हैं ईन मीन तीन जन

निकलना हो कहीं तो सब निकलते हैं एक साथ
घर सूना छोड़कर
यह छोटा सा एकल परिवार
कोई एक बाहर चला जाए तो दूसरों को
काटने को दौड़ता है घर

नए चलन ने बहुत सहूलियत बख्शी है
चोरों को

कम हो रहा है मिलना जुलना
कम हो रही है लोगों की जान पहचान
सुख दुख में भी पहले की तरह इकट्ठे नहीं होते लोग
तार से आ जाती है बधाई और शोक सन्देश

बाबा को जानता था सारा शहर
पिता को भी चार मोहल्ले के लोग जानते थे
मुझे नहीं जानता मेरा पड़ोसी मेरे नाम से
अब सिर्फ एलबम में रहते हैं
परिवार के सारे लोग एक साथ
टूटने की इस प्रकिया में क्या क्या टूटा है
कोई नहीं सोचता

कोई ताला देखकर मेरे घर से लौट गया है!

*****